IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

देवकीनन्दन खत्री कृत उपन्यास चन्द्रकान्ता में तिलिस्म

नवल पाल
हिन्दी शोधार्थी
गुरू काशी विश्वविद्यालय] तलवंडी साबो]
पंजाब।
रोल नं. A206841003
शोध निर्देशक
डॉ. ज्ञानी देवी गुप्ता
सहायक आचार्य हिन्दी
विभागाध्यक्ष हिन्दी विभाग
गुरू काशी विश्वविद्यालय] तलवंडी साबो]
पंजाब।

आदिकाल से ही मानव जिज्ञासु प्रवृति का रहा है। सृष्टि के विभिन्न रहस्यों का उद्घाटन कर उनको जानने की इच्छा उसमें सदा ही बलवती रही है। प्रकृति के चमत्कार व गूढ़ रहस्य उनको अपनी ओर आकर्षित करते रहे हैं। इन रहस्यों को जानने की लालसा ने एक और उसको अनुसंधान दृष्टि प्रदान की है तथा दूसरी और इस प्राकृतिक सम्पदा ने उसका मनोरंजन भी किया है। मनोरम उद्यान, निर्मल जलाषय और विभिन्न जीव–जन्तु आदि प्राकृतिक उपादान व्यक्ति की सुख–सुविधा के सनातन साधन रहे हैं, तो वहीं बीहड़ वन, आकाष की ऊंचाईयों को नापते पर्वत, अथाह समुद्र तथा इन सब के ऊपर उपग्रह, ग्रह, नक्षत्र जो मनुष्य के इतने निकट होते हुए भी इतने रहस्मयी बने हुए हैं कि वह वैज्ञानिक बन जाने के बाद भी प्रकृति के इस रूप को देखकर अपने ज्ञान और विवेक को भ्रमित कर बैठता है, और उसकी खोज का सिलसिला अन्त से आरम्भ की और फिर से मुड़ जाता है।

मानव ने अपनी प्रारम्भिक अवस्था से ही सृष्टि के इन चमत्कारों को आशीर्वाद या अभिषाप के रूप् में लिया। अपने सरल व सहज ज्ञान से उसने प्रकृति के उन रूपों को आशीर्वाद मान लिया। जो कि उसकी दिनचर्या में सहायक हुए तथा जिस स्थान पर व प्रकृति से हार मान बैठा, वहाँ वह उसके लिये अभिषाप और दैवीय शक्ति बन गई, जिसकी पूजा और अर्चना के विभिन्न तरीके खोजना आदिमानव के लिए आवश्यक हो गया। प्रकृति के इस अलौकिक और दैवीय स्वरूप को अपने अनुकूल या अधीन बनाने के लिए ही विभिन्न मंत्रों, तंत्रों और जादू–टोनों से पूर्ण क्रियाओं का जन्म हुआ। इन अज्ञात रहस्यों की व्याख्या मानव ने अपनी कल्पना के आधार पर की। इस प्रकार अतिरंजित कल्पना तथा अनुभूति के सन्मिश्रण से कथा या आख्यान का जन्म हुआ। यही कारण है कि प्राचीन कहानी और कथाओं में हमें चमत्कार और अलौकिकतापूर्ण वातावरण के दर्शन होते हैं।

इन्द्र का रूप बदलकर गौतम ऋषि बन जाना, मारीच का स्वर्णमृग में बदल जाना, सती सावित्री के समक्ष मृत्यु का साक्षात् उपस्थित होना, जैसे कौतुहल प्रधान प्रसंग हमारे प्राचीन साहित्य में प्रर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। लेकिन अधिक विस्मय और कौतुहल तो पाठक या श्रोता के मन में तब उत्पन्न होता है जब गुफा में सोये हुए ऋषि की दृष्टि से अग्नि की लपट निकलकर कालयवन को खड़े–खड़े भस्म कर देती है। उस शक्तिशाली यौद्धा को, जिसको भय से महान नीतिज्ञ कृष्ण को भी युद्ध से पलायन के लिए बाध्य होना पड़ा, अपना बचाव करने का अवसर तक नही मिल पाता। महाभारत के युद्ध के अंतिम चरण में, महारानी गांधारी के दृष्टिपात से ही दुर्योधन का शरीर बज्र का हो जाता है। जिसपर कभी किसी शस्त्र का कोई असर नही होता। रामायण में मर्यादा पुरूषोत्तम राम के श्रीचरणों के स्पर्ष से पत्थर की षिला, जीवित स्त्री अहिल्या बन जाती है। प्राचीन काल में साहित्य में विस्मयबोधक प्रकरणों को जोड़ने का एकमात्र कारण पाठक का मनोरंजन करना ही नही था, बल्कि प्रकृति के उस अलौकिक और दैवीय स्वरूप के प्रति मानव के मन श्रद्धा और आस्था भी बनाये रखना था, जिससे वह अपनी आदिम अवस्था में हार मान बैठा था। अद्भूत और विस्मयपूर्ण कथानकों की परम्परा का विकास हमें वैदिक, पौराणिक कथाओं और संस्कृत के महाकाव्यों के अतिरिक्त परवर्ती साहित्य में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने आदिम युग में प्राकृतिक सत्यों को न खोज पाने के कारण से मानव ने अतिरंजित कल्पनाशील कथाओं की रचना की हो अथवा अपने संस्कृत मस्तिष्क को क्षणिक विश्राम देने के लिए सुबोध कहानियां लिखी हो, विस्मय बोधक अद्भूत कथाओं का अपना स्थान रहा है। सिन्दबाद की साहसिक यात्रा जैसी कहानियां व्यक्ति के मनोरंजन के सनातन आधार तो हैं ही, लेकिन उसकी सोच को भी एक नई दिशा प्रदान करती हैं। ऐसे आख्यानों में चाहे घटनाओं की संभाव्यता या असंभाव्यता पर प्रष्न चिन्ह न लगा पाते हों लेकिन नायक या नायिका की संवेदना के साथ अवष्य जुड़ जाते हैं। उन पर आई विपत्तियों से हम विकल हो उठते हैं और उनका सुख हमारे मन को शांति देता है। चाहे उनके क्रिया–कलाप अति यथार्थवाद की ओर चल पड़ें किन्तु वे हमारे लिए दैवीय शक्ति से परिपूर्ण आदर्श ही रहते हैं।

19वीं शताब्दी के अंतिम दषक के पहले तक घटना वैचित्र्य की जो धारा किसी–न–किसी रूप में पाठक को आकर्षित करती रही थी। वही धारा 1891 ई. में तिलिस्मी उपन्यासों के नाम से अपने उद्दाम वेग के साथ अवतीर्ण हुई और इसकी निष्चल और तीव्र गति के सामने उपन्यास के वे विषय जो अबतक लेखको की लेखनी के आश्रय पर चल रही थी, स्थिर न रह सकी तथा पाठकवर्ग के लिए प्रायः अवांछनीय हो गये। कौतूहल और चमत्कार प्रियता के प्रति आकर्षण जन जीवन में जैसे कहीं छिपा बैठा था और उपयुक्त समय व अवसर की प्रतीक्षा में था। सन् 1891 ई. में बाबू देवकीनन्दन खत्री के चन्द्रकान्ता उपन्यास के प्रकाषित होते ही, जन–मानस में छिपे आकर्षण को जैसे उचित अवसर मिला, जिसके फलस्वरूप हिन्दी उपन्यास प्रेमी तो इसकी और आकर्षित हुए ही बल्कि ऐसे लोगों ने भी जो हिन्दी की वर्णमाला तक से परिचित न थे, उन्होंने भी हिन्दी सीखी और चन्द्रकान्ता के साथ–साथ अन्य उपन्यासों को भी पढ़ा।

चन्द्रकान्ता उपन्यास के बारे में विभिन्न विद्वानों के मतः–

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार–"चन्द्रकान्ता पढ़ने के लिए ही जाने कितने उर्दूजीवी लोगों ने हिन्दी सीखी।"[1]

डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार–"सन् 1891 ई. में चन्द्रकान्ता के प्रकाशन के साथ देवकीनन्दन खत्री (1891–1913) तिलिस्म का जो करिष्मा लेकर आए उससे हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में धूम मच गई। बहुत से लोगों

ने चन्द्रकान्ता पढ़ने के लिए हिन्दी सीखी। खत्री जी ने अपने समय के अर्ध–षिक्षित जनमानस को पहचाना और उनके मनोरंजनार्थ उपन्यास लिखे।" [2]

डॉ. लक्ष्मीकान्त के अनुसार–"कहा जो यह जाता है कि ऐसे उपन्यासों को पढ़ने के लिए उर्दू जानने वाले लोगों ने हिन्दी पढ़ना शुरू किया था और पढ़ा भी था। ऐसे उपन्यासों ने पहले के लिखे सामाजिक और सुधारवादी उपन्यासों को फीका बना दिया।" [3]

डॉ. माखन लाल शर्मा के अनुसार–"चन्द्रकान्ता उपन्यास के प्रकाशित होते ही हिन्दी भाषा–भाषी लोगों में ही नही, अहिन्दी भाषा–भाषियों में भी खलबली मच गई। जो हिन्दी जानते थे उन्होंने तो इसे पढ़ा ही वरन् जिन्हें हिन्दी की वर्णमाला भी पूर्णतया नही आती थी, उन्होंने भी इस उपन्यास को पढ़ने के लिए हिन्दी सीखी, ओर इसका रसास्वादन करके अपने को धन्य समझा।"[4]

तिलिस्म का अर्थ–हिन्दी शब्दकोष में तिलिस्मी उपन्यास का अर्थ है–"जिस उपन्यास में आष्चर्यजनक कारनामों की भरमार होगी, जहाँ पात्रों के लिए कुछ भी करना असम्भव न होगा, जहाँ पात्र मौत की घाटी से भी किसी चमत्कार के कारण लौटकर सही–सलामत आ जायेगा, विघ्न–बाधाओं से घिरे रहने पर कैंची की तरह मार करता हुआ बाल–बाल बच निकलेगा, वह तिलिस्मी उपन्यास ही कहा जायेगा।"[5]

तिलिस्म के लक्षणः–

डॉ. कृष्णा मजीठिया के अनुसार तिलिस्म के निम्नलिखित लक्षण इस प्रकार से हैं–

"1. तिलिस्म का सम्बन्ध धन अथवा ऐष्वर्य से है। इसकी विजय के साथ सम्पत्ति तथा यष दोनों जुड़े हुए हैं।

2. तिलिस्म बांधने में ज्योतिषी, वैद्य, कारीगर, तांत्रिक आदि की सहायता ली जाती है।

3. तिलिस्म जिस प्रकार से बांधा जाता है, ठीक उसी प्रकार से तोड़ा भी जाता है।

4. सामान्यतः पुरूष के हाथ से तिलिस्म टूटता है और नारी के हाथ से वह खुलता है।

5. तिलिस्म के रक्षक दो प्रकार के होते हैं यथा–एक वे जो पैत्रिक परम्परा से तिलिस्म की रक्षा करते हुए गुप्त स्थानों पर साधु के वेष में रहते हैं और दूसरे वे जिनकी नौकरी इस पद पर होती है। ये तिलिस्म के स्वामी नही होते। इस पद के अधिकरी को दारोगा कहा गया है जो तिलिस्मी उपन्यासों में एक विशिष्ट पात्र है। दारोगा का पद स्त्री और पुरूष दोनों को दिया जा सकता है। भूतनाथ में जमानिया तिलिस्म का दारोगा पुरूष है जबकि चन्द्रकान्ता संतति में मायारानी तिलिस्म पर राज्य करने वाली एक औरत है।

6. तिलिस्म अपने आपमें एक किले के समान है जिसमें मनुष्य के अतिरिक्त सभी सुविधाएं होती हैं। उसमें मीठे पानी की नहरें, मधुर फलों के वृक्ष, स्नानागार, अमूल्य धनराशि सभी कुछ होता है। भूतनाथ के तीसरे हिस्से का बयान तिलिस्म के आकार और उसकी समृद्धि का ही वर्णन करता है।

7. तिलिस्म के कुछ नियम हैं जिनका पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। जो ऐसा नही करता, उस पर देवी का प्रकोप आ गिरता है। तिलिस्म के रक्षक को भी इन शर्तों के सामने झुकना पड़ता है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे भी भारी दण्ड का भागी बनना पड़ता है।

8. तिलिस्मी वर्णन वस्तुतः कथाकार की कल्पना की उपज है जिसमें रहस्य के दर्शन होते है।"[6]

तेजसिंह, देवीसिंह से कई सारी बातें करने के बाद जब दरवाजा खोलने के लिए जाता है तो उस समय का तिलिस्म के बारे में व तिलिस्म के अंदर प्रकृति आदि के दृश्य का खत्री जी ने किस प्रकार से वर्णन किया है वह देखिए–"दरवाजे के ऊपर एक बड़ा–सा शेर बना हुआ था। जिसके मुँह में हाथ बखूबी जा सकता था। तेजसिंह ने देवीसिंह से कहा–इस चेहरे के मुँह में हाथ डालकर इसकी जुबान बाहर खींचो। देवीसिंह ने वैसा ही किया और हाथ भर के करीब जुबान खैंच ली। उसके खैंचते ही एक आवाज हुई और दरवाजा खुल गया। चारों तरफ ऊँची–ऊँची पहाड़ियाँ जिन पर किसी तरह आदमी चढ़ नही सकता, बीच में एक छोटा–सा झरना पानी का बह रहा है और बहुत से जंगली मेवों के दरख्तों से अजब सोहावनी जगह मालूम होती है। चारों तरफ की पहाड़ियाँ नीचे से ऊपर तक छोटे–छोटे करजनी, घुमची, बेर, मकोईचे, चिरौंजी वगैरह के घने दरख्तों और लताओं से भरी हुई है। बड़े–बड़े पत्थर के ढोंके मस्त हाथी की तरह दिखाई देते हैं। ऊपर से पानी गिर रहा है। जिसकी आवाज भली मालूम होती है। हवा चलने से पेड़ों की घनघनाहट और पानी की आवाज तथा बीच में मोरों का शोर और भी दिल को खिंचे लेता है।"[7]

तिलिस्म को बांधने बारे खत्री जी ने अपने उपन्यास चन्द्रकान्ता में किस प्रकार से बताया है। वह देखिये– "पुराने जमाने के राजाओं को जब तिलिस्म बांधने की जरूरत पड़ती थी तो बड़े–बड़े ज्योतिषी, नजूमी, वैद्य, कारीगर और तांत्रिक लोग अपनी ताकत के मुताबिक उसको छिपाने की बंदिष करते थे, मगर साथ ही इसके उस आदमी के नक्षत्र और ग्रहों का भी ख्याल रखते थे जिसके लिए वह खजाना रखा जाता था।" [8]

तिलिस्म के बाहरी दरवाजे का वर्णन करते हुए खत्री जी ने किस प्रकार से कहा है वह देखिए–"कुमारी ने अन्दर जाकर देखा कि बड़ा भारी चौखूटा मकान है। बीच की दीवार तो टूटी–फूटी है, मगर हाता चारों तरफ का दुरूस्त मालूम पड़ता है और आगे बढ़ी, एक दालान में पहुँची जिसकी छत गिरी हुई थी, पर खंभे खड़े थे। ईधर–ऊधर पत्थर के ढेर थे जिनपर धीरे–धीरे पैर रखती और आगे बढ़ी। बीच में एक मैदान देख पड़ा। जिसको बड़े गौर से कुमारी देखने लगी। साफ मालूम होता था कि पहिले यह बाग था, क्योंकि अभी तक संगमरमर की क्यारियां बनी हुई थी, छोटी नहरें जिनसे छिड़काव का काम निकलता होगा अभी तक तैयार थी। बहुत–से फौवारे बेमरम्मत दिखाई पड़ते थे मगर उन सभों पर मिट्टी की चादर पड़ी हुई थी। बीचोबीच उस खण्डर के बड़ा भारी पत्थर का बगुला बना हुआ दिखाई दिया, जिसको अच्छी तरह से देखने के लिए कुमारी उसके पास पास गई और उसकी सफाई और कारीगरी को देख उसके बनाने वाले की तारीफ करने लगी। वह बगुला सुफेद संगमरमर का बना हुआ था और काले पत्थर के कमर बराबर ऊँचे मोटे खम्भे पर बैठाया हुआ था टांगें उसकी दिखाई नही देती थी, यही मालूम होता था कि पेट सटाकर इस पत्थर पर बैठा है। कम–से–कम पंद्रह हाथ के घेरे में उसका पेट होगा। लंबी चोंच, बाल और पर उसके ऐसी कारीगरी के साथ बनाये हुए थे कि बार–बार उसके बनाने वाले कारीगर की तारीफ मुंह से निकलती थी।" [9]

तिलिस्म को तोड़ने का जो तरीका खत्री जी ने बताया है वह देखिए–"बगुले के मुंह की तरफ जमीन पर जो पत्थर संगमरमर का जड़ा है वह पत्थर नहीं मसाला जमाया हुआ है। उसको उखाड़कर सिरके में खूब महीन पीसकर बगुले के सारे अंग पर लेप कर दो। वह भी मसाले ही का बना हुआ है, दो घण्टे में बिलकुल गलकर बह जाएगा। उसके नीचे जो कुछ तार, चर्खे, पहिए, पुर्जे हों सब तोड़ डालो। नीचे एक कोठरी मिलेगी जिसमें बगुले के बिगड़ जाने से बिलकुल उजाला हो गया होगा। उस कोठरी से एक रास्ता नीचे उस कूएं में गया है जो पूरबवाले दालान में है। वहां भी मसाले से बना एक बुड्ढा आदमी हाथ में किताब लिये दिखाई देगा। उसे हाथ से किताब ले लो, मगर एकाएक मत छीनो, नही तो धोखा खाओगे। पहिले उसका दाहिना बाजू पकड़ो, वह मुंह खोल देगा। उसका मुंह काफूर से खूब भर दो, थोड़ी ही देर में वह भी गल के बह जाएगा, तब किताब ले लो। उसके सब पन्ने भोजपत्र के होंगे। जो कुछ उसमें लिखा हो वैसा करो।" [10]

निष्कर्षः– तिलिस्मी उपन्यासों के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के उपर्युक्त विचारों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इस उपन्यास में चाहे जो न्यूनताएं रही हों, चाहे हम इनको साहित्य की श्रेणी में लाने का साहस न कर पायें, परन्तु इन उपन्यासों ने उस समय कथा की बढ़ती हुई माँग को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निबाही है, उपन्यास रचना को षिल्प सम्बन्धी देन भी दी है। प्रेमकथा पर आधारित ये उपन्यास पाठक को तरह–तरह के तिलिस्मी की सैर तो करते ही हैं, परन्तु यह संदेष भी देते हैं कि जीवन का कोई भी लक्ष्य एकाएक प्राप्त नहीं होता, बल्कि कुछ जटिलताएं होती हैं। उनके समाधान के लिए जितनी आवष्यकता प्रत्युत्पन्नमति की होती है। उतनी ही जरूरत होती है, दृढ़निष्चयी और प्रयत्नषील बनने की। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि चन्द्रकान्ता उपन्यास तिलिस्मी होने के साथ–साथ एक प्रेम से ओप–प्रोत उपन्यास भी है।

संदर्भ सूची

---

[1] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ संख्या 476

[2] डॉ. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य का अध्ययन– पृष्ठ संख्या 103

[3] डॉ. लक्ष्मीकांत सिन्हा–हिन्दी उपन्यास साहित्य का उद्भव और विकास, पृ.सं. 125

[4] सं. सुषमा प्रियदर्षिनी, हिन्दी उपन्यास (डॉ. माखनलाल शर्मा का लेख–तिलिस्मी जासूसी, ऐयारी तथा रहस्य प्रधान उपन्यास–पृ.सं.36

[5] हिन्दी साहित्य कोष–पृ.संख्या 151

[6] डॉ. कृष्णा मजीठिया, हिन्दी के तिलिस्मी व जासूसी उपन्यास, पृ.सं. 10

[7] देवकीनन्दन खत्री द्वारा रचित चन्द्रकान्ता, पहला भाग, पहला बयान, पृ.सं. 20

[8] देवकीनन्दन खत्री द्वारा रचित चन्द्रकान्ता, चौथा भाग, बीसवां बयान, पृ.सं. 259

[9] देवकीनन्दन खत्री द्वारा रचित चन्द्रकान्ता, दूसरा भाग, तेरहवां बयान, पृ.सं. 100

[10] देवकीनन्दन खत्री द्वारा रचित चन्द्रकान्ता, दूसरा भाग, चौबीसवां बयान, पृ.सं. 129